Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : **www.shisrrj.com**
OPEN ACCESS
© 2023 SHISRRJ | Volume 6 | Issue 6
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

मध्यकालीन भारत में उर्दू भाषा एवं साहित्य का विकास

डॉ0 मोहम्मद शकीम
पूर्व शोध छात्र, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज,उत्तर प्रदेश।

Article Info
Publication Issue :
November-December-2023
Volume 6, Issue 6

Page Number : 70-75

Article History
Received : 01 Dec 2023
Published : 12 Dec 2023

शोधसारांश – उर्दू भाषा एवं साहित्य का विकास दो विभिन्न संस्कृतियों के सहयोग का परिणाम है। इस कारण किसी एक संस्कृति को इसकी जननी नहीं कहा जा सकता है। इसके विकास में किसी एक विशेष वर्ग अथवा प्रान्त का श्रेय नहीं है, वरन समस्त भारतीयों को है जैसा कि सैय्यद सुलेमान नदवी का मत है कि ''आज कल बाज़ फाज़िलों ने पंजाब में उर्दू और बाज़ अहले दकन ने दकन में उर्दू और बाज़ अज़ीज़ो ने गुजरात में उर्दू का नारा बुलंद किया है। लेकिन हकीकत यह मालूम होती है कि हर मुम्ताज सूबे की मुकामी बोली में मुसलमानों की आमद व रफ़्त और मेलजोल से जो तग़य्युरात हुये उन सबका नाम उर्दू रखा गया है।[23] समस्त भारत वासियों ने चाहे वे हिन्दु हों अथवा मुसलमान उर्दू भाषा के द्वारा अपने विचार अभिव्यक्त किये और स्वतन्त्रता आंदोलन में भी उर्दू अदब की महती भूमिका रही। इस तरह इसके साहित्य को उन्नति के शिखर पर पहुंचाया है। और आज भी बड़े पैमाने पर उर्दू भाषा बोली जाती है। उर्दू भाषा विभिन्न परिस्थितियों से होते हुए आज भी अपनी मिठास के लिए जानी जाती है। साहित्यकार रचना करते समय, फिल्म निर्माता फिल्म बनाते समय उर्दू के शब्दों का प्रयोग करते हैं और ऐसा करके उर्दू भाषा के विकास में अपना योगदान दे रहे हैं।

मुख्यशब्द – मध्यकालीन, भारत, उर्दू, भाषा, साहित्य, मुसलमान, फिल्म, इतिहास।

किसी भाषा का इतिहास उस भाषा तक ही सीमित नहीं होता अपितु वह उसके बोलने वालों की सभ्यता एवं संस्कृति का दर्पण होता है। अतः मध्यकालीन सांस्कृतिक विकास के लिए उर्दू भाषा के इतिहास पर एक दृष्टि डालना आवश्यक है। उर्दू भाषा के मूल स्रोत के सम्बंध में विद्वानों में विभिन्न विचार धाराएँ प्रचलित है। उर्दू के प्रसिद्ध लेखक मोहम्मद हुसैन आज़ाद के अनुसार इसकी उत्पत्ति

Copyright © 2023 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)** which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium for non-commercial use provided the original author and source are credited.

का मूल स्रोत ब्रज भाषा है। डॉ0 महमूद शेरानी ने अपनी पुस्तक 'पंजाब में उर्दू' में इस मत का खण्डन करते हुए लिखा है कि उर्दू की उत्पत्ति केवल एक ही भाषा से नहीं हुई वरन इसकी उत्पत्ति में पंजाबी भाषा का भी विशेष योगदान रहा है।[1] किन्तु डा0 मसूद हुसैन के अनुसार उर्दू भाषा की उत्पत्ति फारसी एवं हरियानी के सम्मिलन से हुई।[2]

इस प्रकार उपर्युक्त विचारधारा में सत्य के अंश तो हैं पर पूर्णता का अभाव है। प्रत्येक भाषा की उत्पत्ति एवं विकास में अत्यधिक समय लगता है और उस भाषा पर तत्कालीन समाज में प्रचलित विभिन्न भाषाओं की छाप भी पड़ती है उर्दू भाषा की उत्पत्ति भी इसी प्रकार हुई। मुसलमानो द्वारा दिल्ली सल्तनत की स्थापना से पूर्व ही हिन्दुस्तानी भाषाओं में फारसी और अरबी के शब्दों का प्रयोग होने लगा था।[3] जब सिंध मुल्तान आदि पर मुसलमानों का अधिकार हो गया तो इस काल (630–986 ई0) तक देशी एवं विदेशी भाषाओं का आदान प्रदान इतना अधिक बढ़ गया कि इसके फलस्वरूप एक नयी भाषा विकसित होने लगी थी।

इसके विकास के दूसरे काल (986–1191 ई0) तक मुसलमानों का अधिकार पंजाब प्रदेश पर भी हो गया । इतना ही नहीं इस काल में अरबी तुर्की, ईरानी, अफ़ग़ानी आदि यहाँ आकर बस गये। इन सबके प्रभाव से हिन्दी कवि भी अपने आप को अछूता न रख सके । पृथ्वीराज चौहान के दरबारी कवि चन्दबरदाई द्वारा रचित 'पृथ्वीराज रासो' में अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है,[4] जैसे सुल्तान, बादशाह, सलाम, हज़रत, परवरदिगार, पैग़ाम, फ़रमान आदि।

इसके विकास का तीसरा काल (1192ई0 के पश्चात) पृथ्वीराज चौहान की पराजय के पश्चात प्रारम्भ होता है। पृथ्वीराज की पराजय से दिल्ली मुसलमानों के अधिकार में आ गई और धीरे–धीरे सम्पूर्ण उत्तरी भारत पर भी मुसलमानों का अधिकार हो गया। अब भारत में प्रथम मुस्लिम राज्य की स्थापना हुई और दिल्ली को केन्द्र का स्थान प्रदान किया गया। इस कारण दिल्ली की महत्ता बढ़ी और लोग दूर प्रान्तों से आकर बसने लगे। क्यों कि मुसलमानों ने सर्वप्रथम सिंध, मुल्तान, पंजाब आदि पश्चिमी प्रदेशों को अपना निवास स्थान बनाया था। अतः अब वे व्यापार, रोजगार आदि विभिन्न उदेश्यों से प्रेरित होकर दिल्ली एवं उसके निकटवर्ती प्रदेशों में बोली जाने वाली भाषाओं (खड़ी गेली) से भी अत्याधिक प्रभावित हुये। इस प्रकार इन सभी भाषाओं के सहयोग से इस नयी भाषा का विकास सम्भव हुआ, जिसने आगे चलकर दिल्ली की सामान्य भाषा का रूप प्राप्त किया और अमीर खुसरो ने इसको 'हिन्दवी' अथवा 'देहलवी' की संज्ञा से विभूषित किया।[5]

इस नई भाषा के विकास में सूफी संतों ने भी विशेष योगदान प्रदान किया।[6] इन संतों में विशेषकर ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती, ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी, हजरत फरीदुद्दीन गंज–ए–शकर, हजरत निजामुद्दीन औलिया, अमीर खुसरो आदि जैसे सूफियों ने अपनी रचनाओं एवं उपदेशों में उर्दू के शब्दों का प्रयोग कर इसके विकास एवं उन्नति में योगदान दिया, जिसके द्वारा इनके विचार सम्पूर्ण देश में फ़ैल गए।[7]

अमीर खुसरो ने उर्दू को एक नई चेतना प्रदान की। इन्होंने फारसी इन्शा और कविता में उर्दू अथवा देहलवी भाषा के प्रयोग से उर्दू साहित्य को जीवन प्रदान किया। अमीर खुसरो की रचनाओं के द्वारा 'हिन्दवी' केवल दिल्ली तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों तक ही सीमित न रही वरन् इसका

प्रसार सुदूर प्रदेशों में भी हुआ।[8] खालिक़ बारी नज़्म खुसरो की उर्दू की पहली नात है जिसमें हिन्दवी, अरबी, फ़ारसी आदि के शब्द प्रयोग किऐ गये हैं।

खुसरो अपनी मसनवी 'नूह सिपेहर' में कहते हैं कि उनके समय में दिल्ली 'बहुत प्रगति की दशा में थी। यह दिल्ली एवं उसके निकटवर्ती प्रदेशों की भाषा थी। इस प्रकार उर्दू की प्रगति में खुसरो ने अपनी रचनाओं द्वारा विशेष योगदान किया। उर्दू के प्रसिद्ध कवि मीर तक़ी मीर ने 'निकातुश शोअ़रा' में लिखा है कि उनके समय तक खुसरो की हिन्दवी की रचनाएं दिल्ली में बहुत लोकप्रिय थीं।[10] मीर का समय 18वीं शताब्दी था।

अमीर खुसरो के अतिरिक्त अन्य सूफी संतो ने भी हिन्दवी का प्रयोग कर उसको प्रगति की ओर अग्रसर किया। शख़ निजामुद्दीन औलिया, ख्वाजा गेसू दराज, शेख हमीदुद्दीन नागौरी शेख शर्फुददीन बु अली कलन्दर आदि ने अपने उपदेशों में हिन्दवी का प्रयोग किया।[11]

उर्दू गद्य लेखन परम्परा का विकास भी इन्ही सूफी संतों के प्रयासों के द्वारा सम्पन्न हुआ।[12] कुछ विद्वान शेख ऐनुद्दीन गंजुल इस्लाम को उर्दू गद्य का सर्वप्रथम लेखक मानते हैं किन्तु इनके द्वारा लिखित पुस्तक अप्राप्य है।[13] अतः आधिकतर विद्वान ख्वाजा मोहम्मद गेसूदराज को उर्दू गद्य का जन्मदाता तथा उनके द्वारा लिखित मेराजुल आशिक़ीन नामक पुस्तक को उर्दू गद्य की प्रथम पुस्तक स्वीकार करते हैं।[14] इनके अतिरक्त शाह मीरान बीजापुरी ने 'शाहे मरगूबुल कुलूब' शेख बुरहानुद्दीन ने 'जल तरंग', मौलाना वजही ने सबरस की रचना के द्वारा उर्दू गद्य परम्परा के विकास में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया।

सूफ़ी संतों के अतिरिक्त भक्ति आंदोलन के संतों ने भी हिन्दवी (उर्दू) के विकास में अपना विशेष योगदान दिया।[15] क्यों कि इस संतो ने भी अपने उपदेशों को लोकप्रिय बनाने के लिए उस काल की सामान्य भाषा जो कि हिन्दवी थी, को ही माध्यम बनाया। सूफी संतो तथा भक्ति आंदोलन के संतों के प्रयोग में अन्तर केवल इतना था कि सुफियों ने अपने उपदेशों में इस्लाम से प्रेरणा प्राप्त की, तथा भक्ति आन्दोलन के संतो ने हिन्दू धर्म से प्रेरित होने के कारण अपनी रचनाओं में हिन्दू धर्म के विशिष्ट शब्दों का प्रयोग किया। भक्ति आंदोलन के प्रमुख संत कबीर ने भी अपने दोहों को लोकप्रियता प्रदान करने के लिए अरबी, फ़ारसी तथा 'हिन्दवी' के शब्दों का प्रयोग किया है।

कबीर शरीर सराय है क्यो सोचे सुख चैन।
कूच नकार साँस बाजत है दिन रैन।।

कबीर ने एक गजल की भी रचना की है जिसका स्वरूप बाद की उर्दू से बहुत कुछ मिलता जुलता है। वह ग़ज़ल इस प्रकार है–

हमन है इश्क मस्ताना हमन को होश्यारी क्या,
रहे आजाद या जग में हमन दुनिया से यारी क्या।

गुरु नानक ने भी अपने उपदेशों को लोकप्रिय बनाने के लिए उर्दू के शब्दों का प्रयोग किया है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि सूरदास और तुलसीदास ने भी अपनी रचनाओं में अरबी, फ़ारसी तथा उर्दू के शब्दों का प्रयोग किया है।

इसके अतिरिक्त दिल्ली सल्तनत के विस्तार से भी उर्दू भाषा का बहुत प्रसार हुआ।[16] सुल्तान अलाउद्दीन ख़िलजी की गुजरात एवं दक्षिण विजय के फलस्वरूप इसका क्षेत्र और भी विस्तृत हो गया। इसके पश्चात दक्षिण में भी उर्दू का प्रयोग होने लगा ।

मुग़ल बादशाह बाबर ने अपनी आत्मकथा तुजुक–ए–बाबरी (जो कि तुर्की भाषा में है) में उर्दू के शब्दों का प्रयोग किया है, जैसे–हाथी, पान, गिलहरी, दोपहर आदि।

अकबर ने राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बंध स्थापित करके भी उर्दू के विकास में अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया। वैसे तो अकबर के काल में प्रत्येक क्षेत्र में विकास एवं प्रगति हुई, लेकिन साहित्य के क्षेत्र में विशेष प्रगति हुई ।

इस काल में बहुत से संस्कृत के ग्रंथों का अनुवाद फारसी में हुआ। इस प्रकार अकबर ने साहित्य के क्षेत्र में भी हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के निकट लाने की चेष्टा की। अकबर के काल में कवियों ने भी अपनी रचनाओं में उर्दू के शब्दों का प्रयोग किया। अकबर के काल में 'हिन्दवी' को लोग 'रेख़ता' के नाम से भी जानने लगे थे।[17]

अकबर के काल में जातीय मिश्रण के फलस्वरूप भाषा का मिश्रण भी बड़ी तीव्र गति से हुआ। इस प्रकार रेख़ता (उर्दू) की लोकप्रियता बढ़ने लगी और अब यह बोलचाल की सीमा को पारकर भाषा की सीमा में प्रविष्ट हो चुकी थी। शाहजहाँ तथा औरंगज़ेब के शासनकाल में रेखता पूर्ण रूप से विकसित हुई। शाहजहाँ के शासनकाल में रेखता को उर्दू भी कहा जाने लगा तथा इसी काल में उर्दू शायरी की परम्परा भी बढ़ने लगी। पण्डित चन्द्रभान ब्राहमण जो शाहजहाँ के दरबार में मुंशी थे।[18] उन्हें उर्दू शायरी का बड़ा शौक़ था। उनकी एक ग़ज़ल का मतला इस प्रकार है।

खुदा ने किस शहर के अन्दर हमन को लाये डाला है,
न दिल्बर है न साक़ी है न शीशा है न प्याला है।

इनके अतिरिक्त ग़नी कश्मीरी ने भी उर्दू शायरी के विकास में अपना योगदान दिया। इस प्रकार कवियों ने उर्दू के प्रसिद्ध कवि वली दकनी का मार्ग प्रशस्त किया जो कि आधुनिक उर्दू शायरी के जन्म दाता माने जाते हैं।

वली का पूरा नाम शम्सुद्दीन था और वली इनका तखल्लुस था। इनका जन्म औरंगाबाद में 1668 ई0 में हुआ था। वो उच्च शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश के अहमदाबाद गए जो कि उन दिनों शिक्षा का एक प्रसिद्ध केन्द्र था। अहमदाबाद में रहकर मौलाना वजीहउद्दीन के मदरसे में शिक्षा ग्रहण की और तत्पश्चात् औरंगाबाद चले गये और शायरी आरम्भ कर दी। 1700 ई0 में यह दिल्ली भी आये और यहाँ उनकी भेंट उस काल के प्रसिद्ध सूफी कवि शाह सादुल्ला गुलशन से हुई। शाह गुलशन ने इनको फारसी शैली एवं विषय को रेखता (उर्दू) में भी समावेश करने तथा दिल्ली में बोले जाने वाले मुहावरों को भी अपनी शायरी में प्रयोग करने का परामर्श दिया।[19] वली ने अपने गुरु के निर्देशों का पालन किया और तत्पश्चात एक दीवान (पद्य संग्रह) की रचना की। मुग़ल बादशाह मोहम्मद शाह के निमंत्रण पर वली 1722 ई० में दिल्ली पधारे, जहाँ उन्होंने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कर विशेष ख्याति प्राप्त की थी। उनकी शैली अत्यंत सहज एवं सरल थी जिसके फलस्वरूप उनकी गज़लें अति लोकप्रिय हुई।[20]

वली के समय में उर्दू शायरी बड़ी तीव्र गति से अपने विकास की ओर अग्रसर हुई और आबरू, आरज़ू, हातिम, मज़हर जाने जानाँ, मीर, दर्द, तथा सौदा जैसे उच्च कोटि के कवियों ने वली द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का अनुसरण कर उर्दू शायरी को समुन्नतिशील बनाया। मीर तक़ी मीर ने उर्दू शायरी के विभिन्न क्षेत्रों मे रचनायें की, किन्तु विशेषकर ग़ज़ल के क्षेत्र में महान सफलता प्राप्त हई, जोकि अन्य किसी शायर को नहीं प्राप्त हुई। मीर कुछ समय पश्चात दिल्ली से लखनऊ चले गये, जहाँ उनका बहुत स्वागत हुआ। मीर ने अपने हृदय के भावों को बहुत सहज एवं अत्यंत स्वभाविक ढंग से अपनी रचनाओं में व्यक्त किया।[21]

मीर तक़ी मीर के अतिरिक्त ख्वाजा मीर दर्द एवं मिर्ज़ा मोहम्मद रफी सौदा ने अपनी रचनाओं द्वारा उर्दू शायरी की प्रगति में विशेष योगदान दिया। ख्वाजा मीर दर्द ने अपनी रचनाओं में तसव्वुफ अथवा सुफीवाद का पुट दिया है। इस प्रकार दर्द ने अपनी रचनाओं के द्वारा सूफीवादी शिक्षाओं का प्रचार किया। किन्तु सौदा ने अपनी रचनाओं को उच्च अलंकारिक वेशभूषा के द्वारा सुसज्जित करने का प्रयास किया है।

मीर और सौदा के पश्चात् लखनऊ स्कूल के अन्तर्गत आतिश, नासिख़, मीर अनीस एवं दबीर उर्दू के प्रमुख कवि हुये। अनीस एवं दबीर ने हज़रत इमाम हसन और हुसैन की स्मृति में मरसिया[22] की रचनाएँ की। दिल्ली स्कूल के अन्तर्गत ज़ौक़, ग़ालिब, मोमिन जैसे प्रसिद्ध कवियों ने अपनी रचनायें कीं। ग़ालिब ने अपनी रचनाओं में तर्क एवं दर्शन का भी समावेश किया। इन शायरों ने अपनो शायरी के माध्यम से उस समय के समाज की स्थिति का भी विवरण दिया है। तत्कालीन समाज कैसा था इनकी शायरी को पढ़ कर के अन्दाजा लगाया जा सकता है।

इस प्रकार उर्दू भाषा एवं साहित्य का विकास दो विभिन्न संस्कृतियों के सहयोग का परिणाम है। इस कारण किसी एक संस्कृति को इसकी जननी नहीं कहा जा सकता है। इसके विकास में किसी एक विशेष वर्ग अथवा प्रान्त का श्रेय नहीं है, वरन समस्त भारतीयों को है जैसा कि सैय्यद सुलेमान नदवी का मत है कि ''आज कल बाज़ फाज़िलों ने पंजाब में उर्दू और बाज़ अहले दकन ने दकन में उर्दू और बाज़ अज़ीज़ो ने गुजरात में उर्दू का नारा बुलंद किया है। लेकिन हकीकत यह मालूम होती है कि हर मुम्ताज सूबे की मुकामी बोली में मुसलमानों की आमद व रफ़्त और मेलजोल से जो तग़य्युरात हुये उन सबका नाम उर्दू रखा गया है।[23] समस्त भारत वासियों ने चाहे वे हिन्दु हों अथवा मुसलमान उर्दू भाषा के द्वारा अपने विचार अभिव्यक्त किये और स्वतन्त्रता आंदोलन में भी उर्दू अदब की महती भूमिका रही। इस तरह इसके साहित्य को उन्नति के शिखर पर पहुंचाया है। और आज भी बड़े पैमाने पर उर्दू भाषा बोली जाती है।

इस तरह हम दखते हैं कि उर्दू भाषा विभिन्न परिस्थितियों से होते हुए आज भी अपनी मिठास के लिए जानी जाती है। साहित्यकार रचना करते समय, फिल्म निर्माता फिल्म बनाते समय उर्दू के शब्दों का प्रयोग करते हैं और ऐसा करके उर्दू भाषा के विकास में अपना योगदान दे रहे हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

1. शेरानी महमूद खान, पंजाब में उर्दू, मकतबा कुल्लियाँ बशीरतगंज लखनऊ 1949, पृष्ठ–21
2. हुसैन मसूद, मुकदम–ए–तारीख़े–ज़बान उर्दू एकेडमी सिंध 1966 पृष्ठ 138
3. सन्दीलवी शुजाअत अली, तआरूफ तारीखे ज़बान–ए–उर्दू सरफराज कौमी प्रेस लखनऊ, 1963, पृष्ठ–15
4. हुसेन युसुफ, ग्लिम्पसेस आव मेडिवल इंडियन कल्चर, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1959, पृष्ठ–102
5. अहमद लईक, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद 2009 पृष्ठ 67
6. चटर्जी, एस0 के0, दि ओरिजिन एण्ड डेवलपमेंट आफ दि बंगाली लैंगवेज कलकत्ता युनिवर्सिटी प्रेस कलकत्ता 1926, पृष्ठ–12
7. सुल्ताना रफिया, उर्दू नस्र का आग़ाज और इरतक़ा, मजलिसे तहकीके उर्दू हदराबाद संस्करण–1 पृष्ठ–23
8. वही, पृष्ठ 47
9. पूर्वोक्त, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ–67–68
10 वही, पृष्ठ– 68
11. पूर्वोक्त, तआर्रूफ़ तारीखे ज़बान उर्दू, पृष्ठ 16–20
12. वही, पृष्ठ–1–20
13. फिराक रघुपति सहाय, उर्दू भाषा और साहित्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ, 2008, पृष्ठ–83
14. हक़ अब्दुल, उर्दू की इब्तेदाई नशोनुमा अंनजुमन प्रेस कराची सहयोगी ग़ालिव इंस्टीटयूट नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ–16
15. पूर्वोक्त, ग्लिम्पसेस आव मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृष्ठ –108
16 पूर्वोक्त, उर्दू नस्र का आगाज़ और इरतक़ा, पृष्ठ–46
17. पूर्वोक्त, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति पृष्ठ–70
18. सक्सेना, बी0 पी0 हिस्ट्री ऑव शाहजहाँ आफ देहली इंडियन प्रेस इलाहाबाद 1932, पृष्ठ–254–55
19. नदवी, अब्दुल सलाम, शेरूल हिन्द भाग–1 दारूल मुसन्नफ़ीन शिबली एकेडमी आजमगढ़ 2009, पृष्ठ– 26
20. वही, पृष्ठ–26–27
21. वही, पृष्ठ–26–30
22. मरसिया शोक गीत है जिसमे मरे हुए व्यक्ति का गुणगान कर शोक प्रकट किया जाता है।
23. पूर्वोक्त, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ 73